

प्रभा खेतान के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंधों का मनोवैज्ञानिक पक्ष

¹भूपेंद्र सिंह, ²डॉ. कुलदीप

¹शोधार्थी, ²पर्यवेक्षक

¹⁻²विभाग: हिन्दी, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर, राजस्थान

सार

यह शोधपत्र प्रभा खेतान के साहित्य में स्त्री पुरुष संबंधों के मनोवैज्ञानिक पक्ष को समझने का प्रयास करता है। उनकी आत्मकथा अन्या से अनन्या तथा अन्य रचनाएँ स्पष्ट करती हैं कि बचपन की उपेक्षा, प्रेम और स्नेह की कमी, रंगभेद, अकेलापन और भावनात्मक असुरक्षा ने उनके व्यक्तित्व और संबंधों को गहराई से प्रभावित किया। यही अनुभव उनकी स्त्री पात्रों में दिखाई देते हैं, जो प्रेम, स्वीकार्यता और पहचान की खोज में मानसिक संघर्ष से गुजरती हैं। डॉ. सर्राफ के साथ उनका दीर्घ संबंध स्त्री पुरुष रिश्तों में निर्भरता, असमानता, भावनात्मक निवेश और सामाजिक अस्वीकृति जैसी मनोवैज्ञानिक स्थितियों को उजागर करता है। प्रभा खेतान दिखाती हैं कि पुरुष प्रायः प्रेम को भविष्य की संभावना और स्वार्थ के रूप में देखते हैं जबकि स्त्री उसे वर्तमान की जरूरत और भावनात्मक पूर्ति के रूप में जीती है। यह मनोवैज्ञानिक असंतुलन उनके लेखन की केंद्रीय धुरी बनता है। उनके साहित्य में पितृसत्ता, विवाह संस्था, प्रेयसी की असुरक्षा, स्त्री का आत्मसंघर्ष, प्रेम में त्याग और स्त्री की पहचान का प्रश्न एक जटिल मनोवैज्ञानिक परत के रूप में उभरता है। इसी जटिलता ने प्रभा खेतान को स्त्री मन की मार्मिक और संवेदनात्मक लेखिका के रूप में स्थापित किया।

मुख्य शब्द: प्रभा खेतान, स्त्री पुरुष संबंध, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, आत्मकथा, अन्या से अनन्या, भावनात्मक निर्भरता, पितृसत्ता, स्त्री अस्मिता, प्रेम संबंध, सामाजिक अस्वीकृति।

भूमिका

प्रभा खेतान का जन्म 1 नवंबर 1942 को हुआ। कलकत्ता के मारवाड़ी परिवार में जन्मी प्रभा जी के जन्म से परिवार में किसी को विशेष खुशी नहीं हुई थी। उनके पिता का नाम स्व. श्री लादूराम खेतान व माँ का नाम पुरनी देवी खेतान था, इनका पैतृक निवास स्थान सुजानगढ़ था। सात भाई-बहनों के बीच डॉ. प्रभा खेतान ने पाँचवीं बेटी के रूप में जन्म लिया। संकुचित सामाजिक दृष्टिकोण के कारण जहाँ लड़की के जन्म को यूँ ही मनहूस समझा जाता है, वहाँ परिवार में पाँचवीं बेटी को कितना स्नेह व सम्मान मिल सकता है इसका अंदाजा हम सहज ही लगा सकते हैं। फिर भी प्रतिष्ठित व समृद्धशाली व्यापारिक घराने में पिता के पुत्री के प्रति अटूट प्रेम के कारण डॉ. प्रभा खेतान का बचपन वैभव के बीच व्यतीत हुआ। पिता के अचानक देहावासन के कारण इनके परिवार को काफी संघर्षों का सामना करना पड़ा। व्यवसायिक भागीदारों की बेईमानी के कारण इनके पिता का व्यापार एक बार बिखरने के कगार पर भी आ खड़ा हुआ।

प्रभा खेतान का लेखन कार्य :

समकालीन नारी जीवन में संघर्ष को देखकर और महसूस कर प्रभा जी ने लेखन किया है। लेखन की शुरुआत उम्र के बारहवें साल में ही हो गई थी, उनकी पहली कविता 'सुप्रभात' में छपी थी। प्रभा खेतान के काव्य संग्रहों में 'अपरिचित उजाले', 'सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं', 'एक और आकाश की खोज में', 'कृष्णधर्मा मैं', 'हुस्न बानो और अन्य कविताएँ', 'अहिल्या' आदि प्रमुख हैं। 'आओ पेपे घर चलें', 'तालाबंदी', 'अग्निसंभवा', 'एड्स', 'छिन्नमस्ता', 'अपने अपने चेहरे', 'पीली आँधी', 'स्त्री पक्ष' आदि इनके उपन्यास हैं। निबंध साहित्य में 'सार्त्र का अस्तित्ववाद', 'शब्दों को मसीहा सार्त्र' 'वह पहला आदमी – अल्बेयर कामू', 'बाजार के बीच बाजार के खिलाफ', 'उपनिवेश में स्त्री' आदि उल्लेखनीय बन पड़े हैं।

पुरस्कार:

प्रभा खेतान को कई साहित्यिक पुरस्कार प्राप्त हुए 'प्रतिभाशाली महिला पुरस्कार', 'टॉप पर्सनैलिटी अवार्ड', 'महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन पुरस्कार राष्ट्रपरि' के हाथों, 'रत्नशिरोमणि पुरस्कार', 'इंदिरा गाँधी सॉलिडेरिटी अवार्ड' ।

सन् 2007 में प्रभा खेतान ने अपनी आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' लिख कर अपने जीवन का यथार्थ हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया। यह आत्मकथा प्रभा खेतान द्वारा स्वयं के सषक्तिकरण की सफल परियोजना है। उन्हें व्यवसाय व साहित्य दोनों में सफलता प्राप्त हुई लेकिन वे अपनी भावुकतावश व मन पर काबू न पाने के चलते जिन्दगी भर प्रेम पाने को लालायित रहती हैं। अपनी शर्तों पर चलने की जिद ने उन्हें अकेलेपन व दर्द के सिवाय कुछ नहीं दिया। इसके बावजूद वह अन्या से अनन्या बन गयी। डॉ. प्रभा खेतान की शिक्षा दीक्षा का व्यवस्थित प्रबंध बचपन से ही कर दिया गया था। इन्होंने उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बालीगंज शिक्षा सदन स्कूल कलकत्ता से प्राप्त की। तत्पश्चात् आगे पढ़ने की जिद के कारण इनका प्रवेश कलकत्ता के ही सुपसिद्ध प्रेसीडेंसी कॉलेज में करा दिया गया। अपने लेखन में उन्होंने बदलते आधुनिक परवेश की खोखली हुई जिन्दगी और दरकते संबंधों को दर्शाने का कार्य प्रभावी ढंग से किया है। आधुनिकता के संदर्भ में मनुष्य की धार्मिक आस्थाओं और मानवीय मूल्यों में हो रहे पतन का जीवंत चित्र उनके साहित्य में उपस्थित हुआ है।

महिलाओं के जीवन में एक खिड़की के रूप में उनकी आत्मकथा की खोज

उपन्यास लेखिका प्रभा खेतान की आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' पहले 'हंस' पत्रिका में क्रमशः प्रकाशित हुई। पुस्तक रूप में सन 2007 में आते ही बहुत चर्चित हुई। आत्मकथा विधा के सम्बन्ध में अपनी धारणा भी उन्होंने व्यक्त कर दी है। वे आत्मकथा को 'स्ट्रेटीज का नाच' कहती हैं— "आप चौराहे पर एक-एक कर कपड़े उतारते जाते हैं। लिखने वाले के मन में आत्मप्रदर्शन का भाव किसी-न-किसी रूप में मौजूद रहता है, मन के किसी कोने में हल्की सी चाहत रहती है कि लोग उसे गलत नहीं समझें कि जो कुछ भी वह लिख रहा है उसे सही परिप्रेक्ष्य में लिया जाए, पर दर्शक वृन्द अपना-अपना निर्णय लेने में स्वतंत्र हैं। उनका मन, वे इस नाच को देखें या फिर पलटकर चले जाएँ।"²

प्रभा जी उपन्यास की तुलना में आत्मकथा की आयु अधिक मानती हैं। "पाठक और लेखक के बीच एक साझेदारी होती है—दशकों बाद भी यह कहानी जिन्दा रहती है और रहेगी—हाँ, इसको पढ़ने का तरीका जरूर बदलता जाएगा। आज जिस रूप में इसे पढ़ा जा रहा है सम्भव है उस रूप में यह कहानी भविष्य में न पढ़ी जाए मगर आत्मकथा अपने पाठकों को बाध्य करती है कि वे खुद भी अपने आप से सवाल करें एवं वर्ग, जाति एवं संस्कृति के प्रभाव को समझें।"³

कलकत्ते के व्यापारिक दृष्टि से सम्पन्न समझे जाने वाले खेतान परिवार में जन्म लेने वाली प्रभा ने अपने जीवन की बहुत बड़ी भूल अपने से आयु में दुगुने, विवाहित और पाँच संतानों के पिता नेत्र विशेषज्ञ डॉ० सराफ के प्रेम में फँस कर की। डाक्टर के पास आँख दिखाने गई और अपना तन मन दोनों दे आई। डॉक्टर ने उन्हें बार-बार सावधान किया लेकिन वे नहीं संभली। अन्ततः उन्हें गर्भपात करवाना पड़ा। यदि वे चाहती तो अपना रास्ता बदल सकती थी। सब कुछ धो-पोछ कर नई शुरुआत कर सकती थीं, लेकिन उन्होंने स्वयं को उस प्रेम के प्रवाह में बहने दिया। प्रभा खेतान की आत्मकथा अन्या से अनन्या में कई महत्वपूर्ण विधागत चीजें हैं जिनका ख्याल रखा गया है, मसलन लेखिका ने अपने परिवार सामाजिक परिवेश, संस्कृति, मारवाड़ी जाति और पश्चिम बंगाल के परिवेश के बहाने बंगाली जाति के बारे में भी अपने व्यक्तित्व के रिश्तों को भी खोला है। डॉक्टर अपनी पत्नी को छोड़ नहीं पाए, ये उनकी ब्याहता नहीं बन पाई। दोनों पक्षों में साहस का अभाव था—"प्यार को कार्य रूप में परिणत करने के लिए जिस साहस की जरूरत पड़ती है हमारे पास वह नहीं था दोनों बड़े बुजुर्ग थे।"⁴

आखिर क्या कारण था कि एक सम्पन्न घर की युवती एक चालीस साल के विवाहित व्यक्ति से प्रेम कर बैठी ? उत्तर आत्मकथा में है। उनका उपेक्षित बचपन, उनका घोर एकाकी जीवन इन सब के मूल में है। “नदी के द्वीप और किसे कहेंगे? मेरा तो इहलोक-परलोक में कोई नहीं। हमेशा-हमेशा से अकेली हूँ। निःसंग रही हूँ। किसी को मुझसे प्यार नहीं, किसी की मुझ पर ममता नहीं, किसी ने क्षण भर को नहीं सोचा कि मेरी यह अकेली जिन्दगी कैसे चलेगी? स्नेह, प्यार विहीन..... थार का रेगिस्तान जैसा मेरा जीवन रहा है, जहाँ केवल अकेले चलती रही हूँ।”⁵

प्रभा जी का बचपन बहुत यातनापूर्ण बीता उनका दुर्भाग्य यह है कि परिवार में माँ के द्वारा उपेक्षित एवं अपमानित रहीं प्रभा जी के जन्म के बाद उनकी माँ बीमार रहने लगी। प्रभा जी को माँ का प्यार नहीं मिला और तभी घर में एक ‘आया’ को रखा गया। ये प्रभा जी की दाई माँ थी। इनका प्यार पाकर ही प्रभा जी का बचपन बीता। सभी भाई और बहन गोरे और सुन्दर थे। उनके बीच प्रभा जी का रंग साँवला था। साँवला रंग होने के कारण वो माँ की उपेक्षा पात्र बनती हैं। प्रभा जी स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट थी और यही कारण था कि वह अपनी बहनों से बड़ी लगती। प्रभा जी रंग भेद का शिकार रही और अपनी माँ का दुलार पाने के लिए तरसती रही। प्रभा जी खुद लिखती हैं कि कितना अनाथ बचपन था। वे कहती हैं— “अम्मा ने मुझे कभी गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटों उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती। शायद अम्मा मुझे भीतर बुला लें। शायद.....हाँ, शायद अपनी रजाई में सुला ले। मगर नहीं एक शाश्वत दूरी बनी रहती हमेशा हम दोनों के बीच। अम्मा मेरी बातों को समझ नहीं पाती थी। उपेक्षा पाकर बच्चे का दुखी मन कुंठित हो अपनी कमियाँ ढूँढ़ता रहता है। इतना होते हुए भी प्रभा जी अपने पिताजी की लाडली बेटी थी। पर यह दुर्भाग्य जरूर रहा है कि उनकी स्नेह की छाया कुछ समय के लिए थी। बचपन की उपेक्षा ने हमेशा प्रभा जी का पीछा किया।

माँ के बदले दाई माँ उनकी देखभाल करती हैं। सब उन्हें दाई माँ की बेटी कहते हैं। रंग साँवला, दांत कुछ बाहर को निकले हुए। बचपन की उपेक्षा और पक्षपात ने उन्हें दुःखी किया—“माँ ने प्यार नहीं किया, यह तो समझ रही थी, क्योंकि मैं ठहरी काली। माँ की तरह गोरी नहीं। मैं बहुत शान्त, गीता की तरह स्मार्ट नहीं, मुँह पर फटाफट जवाब नहीं दे पाती, लेकिन मैं पढ़ने में तो अच्छी थी, क्या यह काफी नहीं था ?”⁶ जिस प्रकार प्रभा का बचपन कठिनाइयों से भरा था, वैसे ही उनकी शिक्षा की सीढ़ियाँ भी हिचकोले देती हुई आगे बढ़ने दे रही थीं। प्रभा जी की परेशानियाँ हमेशा उनके साथ चलती रहीं। प्रभा जी को बचपन से ही प्रकृति के प्रति मोह था या बचपन की परिस्थिति ने उनको प्रकृति के इतने करीब ला दिया था कि वह घंटों अकेली बैठती। वह काल्पनिक जगत में विचरती, कभी चिड़िया से बात करती तो कभी घंटों गंगा की लहरों को निहारती हुई उसमें कुछ खोजा करती। खुले गगन में उड़ते पक्षी उनके मन को खींचते कभी पेड़-पौधे भी उनसे कुछ कहते।

पुरुष प्रधान समाज ने हमेशा नारी को अपने अनुरूप जीवन जीने के लिए मजबूर किया है। नारी भी अपने आप को पुरुषों के द्वारा निश्चित साँचे में ढालती है और इसके विरोध में जिसने आवाज उठाई वह समाज की दृष्टि में हीन बन जाती है आज भी स्वयं को तलाशती एवं अपने अस्तित्व के लिए स्त्री संघर्ष करती है। ‘अन्या से अनन्या’ में अविवाहित, आत्मनिर्भर एवं अपने अस्तित्व को तलाशती हुई स्वाभिमानी स्त्री के कटु एवं संघर्षमय पक्ष को उजागर किया गया है। प्रभा जी का बचपन प्यार एवं पारिवारिक उपेक्षा में व्यतीत हुआ है और उनका जीवन सामाजिक उपेक्षा में व्यतीत हुआ है। विवाह के बाद स्त्री अपना सब कुछ छोड़कर एक ऐसे व्यक्ति के लिए अपना जीवन समर्पित कर देती है जिसे परमेश्वर की उपाधि प्राप्त है लेकिन क्या कोई पुरुष एक स्त्री के लिए बलिदान दे सकता है जितना स्त्री। “औरत जैसे पुरुष के लिए जीती है पुरुष भी क्यों नहीं औरत के लिए जी पाता?”⁷ कभी सुरक्षा के नाम पर तो कभी संस्कार के नाम पर स्त्री का शोषण ही हुआ है उसके लिए सती सावित्री का एक आदर्श निश्चित किया गया। पाप और पुण्य जैसे मिथक स्त्री के संदर्भ में ही क्यों निश्चित किए जाते हैं? क्या यही स्त्री की दुनिया है? वैश्विक संदर्भ में नारी की स्थिति भारत की नारी से भिन्न नहीं है इस आत्मकथा में भारतीय एवं अमेरिकी औरत के भयानक सच को

प्रस्तुत किया गया है।

“हमारी औरतें वह चाहे बाल कटी हों या गाँव-देहात से आई हों कहीं भी सुरक्षित नहीं। उनके साथ कुछ भी घट सकता है। सुरक्षा का आश्वासन पितृसत्तात्मक मिथक है। स्त्री कभी सुरक्षित थी ही नहीं। पुरुष भी इस बात को जानता है। इसलिए सतीत्व का मिथक संवर्धित करता रहता है। सती-सावित्री रहने का निर्देश स्त्री को ही दिया जाता है।”⁸ भारतीय समाज में विवाह को एक संस्कार माना जाता है। समाज में विवाहिता को जितना महत्त्व दिया जाता है। उतना मान सम्मान अविवाहिता को नहीं दिया जाता। विवाह नामक संस्था में जिस प्रेम की परिणती होती है, वह व्यक्ति की वैयक्तिक स्वतंत्रता को बाँधती है। प्रभा जी ऐसे व्यक्ति से प्रेम करती थीं जो उनसे 20 वर्ष बड़े थे और विवाहित थे। उन्होंने पूरी जिन्दगी एक ऐसे व्यक्ति के नाम कर दी जिन्होंने उन्हें कभी पत्नी का दर्जा नहीं दिया। जीवन भर प्रेमिका बनकर अपने रिश्ते को ईमानदारी से निभाती रही। वह कहती है— “क्या इन शब्दों को मैंने दर्शन की पुस्तकों से सीखा या फिर ये मेरे संस्कार थे जो मुझसे कहला रहे थे कि सात फेरों के बिना भी तुम मेरे हो। प्यार दिमाग से नहीं हृदय से किया जाता है। और हृदय से यदि हम कुछ करते हैं तो ज्यादा सोचने-समझने की जरूरत नहीं।”⁹

भारतीय समाज में प्रेमिका को महत्त्व नहीं दिया जाता। जिस समाज में विवाहिता स्त्री को निरंतर अपने अस्तित्व को लेकर संघर्ष करना पड़ता है, वहाँ प्रेमिका के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। प्रभा जी को भी अपने अविवाहित रिश्ते को लेकर समाज से संघर्ष करना पड़ा है। उनके मन में यह आत्म संघर्ष है, कि उनकी स्वयं की पहचान क्या है? “मैं प्रभा खेतान.....मैं कौन हूँ? क्या मेरी कोई पहचान नहीं है? मैं सधवा नहीं, क्योंकि मेरी शादी नहीं हुई, मैं विधवा नहीं.....क्योंकि कोई दिवंगत पति नहीं, मैं कोठे पर बैठी हुई रंडी भी नहीं.....क्योंकि मैं अपनी देह का व्यापार नहीं करती। मैं किसी पर निर्भर नहीं करती, स्वावलम्बी हूँ।”¹⁰

“अबला जीवन हाथ तुम्हारी यही कहानी, आँचल में है दूध और आँखों में पानी।” ऐसे दकियानूसी समाज के परंपरागत मापदंड को प्रभा जी अस्वीकार करती हैं। उनका मानना है, कि विवाह ओवरडेटेड संस्था है इसलिए उस संस्था को महत्त्व देने की जरूरत नहीं है। प्रभा जी दाम्पत्य जीवन के परम्परागत मापदण्डों को अस्वीकार करती हैं। अमेरिका के स्त्री जीवन के अंतर्गत डॉक्टर डी और मिसेज डी का वैवाहिक जीवन, आइलिन का जीवन, मरील की गृहस्थी को प्रस्तुत किया है। जब प्रभा जी मरील की बेटी लारा से पूछती हैं, कि तुम अपनी माँ से क्यों नफरत करती हो? तब उसका जवाब ही समाज की सच्चाई को प्रस्तुत करता है—

“नहीं, दरअसल हम सब, मैं और मेरी बहन नैन्सी एक बीमार व्यवस्था की उपज हैं।”¹¹

प्रभा जी पत्नीत्व नामक संस्था एवं समाज से पूछती हैं क्या सारी वैधता सात फेरों से मिलती है? क्या विवाह व्यवस्था ही शाश्वत सत्य है? क्या विवाह से परे किसी रिश्ते का कोई वजूद नहीं? “त्रासदी तो यह थी कि न हमारी शादी हो सकती थी और न हम अलग हो पा रहे थे। क्या इन सामाजिक मान्यताओं से पहले कोई समाज नहीं था? क्या उस समाज में स्त्री पुरुष के विवाहेतर सम्बन्ध नहीं हुआ करते थे?”¹² प्रभा जी परम्परागत रूढ़िवादी समाज के सामने खुलकर अपने आपको डॉ० सराफ की प्रेमिका घोषित करती हैं। जीवन में आर्थिक परेशानियाँ झेलने के बावजूद कभी डॉक्टर साहब से आर्थिक सहायता नहीं माँगती। वह कहती हैं कि— “शादी नहीं होने का मुझे उतना दुख नहीं। मेरा सबसे बड़ा दुख है कि एक विवाहित पुरुष से मेरे नाम का जुड़ा होना, लोग मुझे आपकी रखैल कहते हैं। रखैल तो उसे कहा जाता है जिसका पुरुष भरण-पोषण करता है।”¹³

लेकिन प्रभा जी तो अपना पैसा स्वयं कमाती हैं। वह तो डॉक्टर साहब पर निर्भर भी नहीं हैं। फिर समाज उनको रखैल की उपाधी कैसे दे सकता है? वह परंपरागत “रखैल” का साँचा तोड़ती हैं। क्यों

स्त्री के लिए ही “रखैल” का उपनाम निश्चित किया जाता है ? ऐसा कोई उपनाम पुरुष के लिए क्यों नहीं निश्चित किया जाता ? प्रभा जी भी अपने अविवाहित रिश्ते को लेकर समाज की नजर में पथ भ्रष्ट और अपवित्र थी। वे अन्या से अनन्या थी। “मैं वह अन्य थी जिसे निरंतर निर्मित किया जा रहा था। क्योंकि महज मेरा होना पत्नीत्व नामक संस्था को चुनौती दे रहा था। सहमति की खोज में मैं बुरी तरह थकने लगी थी। मैं बस पति-पत्नी के बीच “एक वह” थी। एक बाहरी तत्त्व, अनचाही स्वीकृति।”¹⁴

प्रभा जी अपने जीवन में बहुत अकेलापन महसूस कर रही थी। पिता की मृत्यु के बाद डॉ० सराफ के रूप में कमी पूरी हुई। प्रेम के अभाव में जिसका बचपन बीता हो, वह स्त्री-प्रेमी के छलावे में आ जाए तो कोई आश्चर्य नहीं। आत्मनिर्भर होने के बावजूद वह डॉक्टर साहब से अलग नहीं हो पाई। इसे उन्होंने रुग्ण निर्भरता कहा है—“डॉक्टर साहब मेरे लिए सुरक्षा प्रतीक थे। मानो उनके लिए मैं जिन्दा थी, उनको कुछ हो जाए, ऐसा मैं सोच भी नहीं पाती। डॉक्टर साहब मेरे लिए बरगद की छाँव थे।”¹⁵

प्रभा जी ने डॉ० सराफ के साथ अपने भावात्मक लगाव का चित्रण किया है प्रेम की पीड़ा का सघन अहसास जिस तरह प्रभा जी के अन्दर व्यक्त हुआ है, वह डॉ० सराफ में कहीं पर भी नजर नहीं आता। प्रेम के बारे में डॉ० सराफ जब भी व्यक्त करते हैं तो सिर्फ आशा बँधाने के लिए। डॉ० सराफ के लिए प्रेम भविष्य की चीज था, जबकि प्रभा जी के लिए वर्तमान था। त्रासदी यह थी कि भविष्य दोनों के हाथ से खिसक गया था। प्रभा जी को आरम्भ में ही अहसास हो गया कि डॉ० सराफ से किया गया प्रेम तकलीफ है। डॉ० सराफ के लिए जीवन के उद्देश्यों में प्रेम का कहीं कोई स्थान नहीं था, जबकि प्रभा जी के लिए जीवन में प्रेम का केन्द्रीय स्थान था। प्रभा जी कहती है— “मैं क्या लगती थी डॉ० साहब की? मैं क्यों ऐसे उनके साथ चली आई? प्रियतमा, मिस्ट्रेस, शायद आधी पत्नी, पूरी पत्नी तो मैं कभी नहीं बन सकती क्योंकि एक पत्नी पहले से मौजूद थी। वे बाल-बच्चों वाले व्यक्ति थे। पिछले बीस सालों से मैं उनके साथ थी। मगर किस रूप में...? इस रिश्ते को...नाम नहीं दे पाऊँगी।”¹⁶

अन्या से अनन्या से एक बात यह भी निकलती है कि स्त्री-पुरुष के प्रेम में वस्तुतः प्रेम तो औरत ही करती है, पुरुष तो प्रेम का भोग करता है। पुरुष में देने का भाव नहीं होता। वह सिर्फ स्त्री से पाना चाहता है। प्रेम के इस लेन-देन वाले भाव में स्त्री का अस्तित्व दाँव पर लगा है। वह अपना सब कुछ दाँव पर लगा देती है और सतह पर हारती नजर आती है। किन्तु वास्तविकता यह है कि जीवन में जीतती स्त्री ही है पुरुष नहीं। प्रेम में आप जिसे चाहते हैं उसके प्रति यदि देने का भाव है तो यह तय है कि जो देगा उसका प्रेम गाढ़ा होगा, जो निवेश नहीं करेगा उसका प्रेम खोखला होगा। प्रेम में भावों संवेदनाओं, सांसें का निवेश जरूरी है। डॉ० सराफ की मुश्किल यहीं पर वे प्रेम चाहते हैं किन्तु निवेश किये बिना।

निष्कर्ष

प्रभा खेतान के साहित्य में स्त्री पुरुष संबंध केवल सामाजिक संरचना का हिस्सा नहीं, बल्कि एक गहरा मनोवैज्ञानिक अनुभव बनकर उभरते हैं। बचपन की उपेक्षा, सांवेलेपन के कारण मिला भेदभाव, मातृस्नेह की कमी, और अकेलेपन ने उनके भीतर प्रेम और स्वीकार्यता की तीव्र आकांक्षा पैदा की। यही भावनात्मक रिक्तता आगे चलकर डॉ. सराफ के साथ उनके असंतुलित और एकतरफा संबंध में दिखाई देती है जहाँ स्त्री का प्रेम निवेश गहरा है जबकि पुरुष का प्रेम सीमित, शर्तों वाला और भविष्य पर टाल दिया गया। प्रभा खेतान इन संबंधों के भीतर छिपे असमान शक्ति संबंध, स्त्री की भावनात्मक निर्भरता, उसकी पहचान का संकट, और पितृसत्ता द्वारा निर्मित सामाजिक दबावों को अपनी लेखनी में ईमानदारी से दर्ज करती हैं। उनके साहित्य में स्त्री पुरुष संबंध किसी दार्शनिक अवधारणा से अधिक मन की पीड़ा, आत्मसम्मान, स्वीकृति, और अस्मिता के संघर्ष का दस्तावेज बन जाते हैं। यही कारण है कि प्रभा खेतान का लेखन स्त्री मन के अनकहे मनोवैज्ञानिक आयामों को उजागर करता है और पाठक को यह समझने पर बाध्य करता है कि प्रेम और रिश्तों की थाह केवल सामाजिक मान्यताओं से नहीं बल्कि मन की अधूरी जरूरतों और गहरे भावनात्मक अनुभवों से तय होती है।

संदर्भ

- जे.एल. शिल्पी, साहित्य की तानाशाही
- टोरेट जॉनसन, वन माइटी पेज, रीड बुक्स प्रकाशन, न्यूयार्क, 2007
- तस्लीमा नसरीन, औरत के हक में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023
- दिनेशनंदिनी डालमिया, मुझे माफ करना, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1985
- दर्शन पाण्डेय, नारी अस्मिता की परख, संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2004
- दशरथ ओझा, समीक्षा-शास्त्र, राजपाल एंड संस प्रकाशन, दिल्ली, 1957
- नगेन्द्र, आस्था के चरण, भाग-2, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1992
- नमिता नेगी, आर्य समाज का हिन्दी आत्मकथा साहित्य को योगदान, मेधा पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 2005
- पदमा सचदेव, बूँद बावडी, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 2014
- पोद्दार रामावतार अरुण, अरुणायन – एक आत्मकथा, भूमिका से, 1974, पॉल ब्रिजिट- कृष्णा सोबतीय व्यक्ति एवं साहित्य, हिन्दी विभाग, सेंट थॉमस कॉलेज, पाला, 2004